प्रस्तुत [illegible] अजमेर राज्य सरकार द्वारा पुरस्कृत [illegible]। अनेक का[illegible] इसे प्रकाशित करने में विलम्ब [illegible] इस हेतु हम क्षमा प्रार्थी हैं।

'एक सपना लिए चल रहा हूँ किसी दिन
इसी भूमि की शक्ल दूंगा बदल—'

अनुभूति का सशक्त गीतकार ' संवेदन और उसकी अभिव्यक्ति में ईमानदारी, तरुण गीतकार श्री ज्ञान भरिल्ल की अपनी विशेषता है। अपनी ही मस्ती में डूब-डूबकर सहज, सरल भावों को छन्दों का बाना पहिना देने की अनोखी प्रतिभा है—ज्ञान भरिल्ल में।

'मैं सोच रहा था क्या माँगू जो मिटे नहीं,
इन्सान ?
इन्सान नहीं मरता दुनियाँ में मरकर भी,
इन्सान जिया करता है अपने यौवन में,
मैंने माँगा इन्सान—मेरी यह नादानी।
मैं इन्सानों के साथ बहुत खुश रहता हूँ,
मन ही तो है—

अंचल और अंगार

मधुशाला मे

रेखाएँ

समय की शिला पर

अंचल और अंगार

अंचल और अंगार—

उस दिन प्राणों के अंचल में
सुख के सुमन तुम्हीं ने डाले,
आज तुम्हीं उन फूलों पर क्यों फेंक रहे अंगार ?

ओ सपनों-से चंचल मनहर !
ओ किरणों-से अतनु, सुशोभन !
मिलनाकांक्षा-से मादक ओ !
थकित प्राण-मन के संजीवन !
उस दिन प्राणों की वंशी में
तुमने ही तो स्वर फूंके थे—
तुम्हें भूल, किसको खोजेगी, अब मेरी मनुहार ?
उस दिन प्राणों के अंचल में . . ।

जीवन - रजनी में चंदा की
रजत - रश्मि-से तुम ही आए,
शून्य हृदय - आकाश - पटल पर
अमिय - घटा-से तुम ही छाए,

उम दिन तुमने ही प्राणों पर
अमृत के रस-कण सींचे थे—
तुम्हें छोड, किसमें ढूँढ़ूँ अब जीवन का आधार ?
उस दिन प्राणों के अंचल में. ....।

तुमने फूल दिए, मैने ले,
उन्हे तुम्हारे चरण चढ़ाया,
तुमने अब अगार दिए है
मैने उर से उन्हे लगाया;
तुम जो देते उसे रक-सा
झोली मे भरता जाता हूँ—
तुम से दूर कहाँ ले जाऊँ मै अपना ससार ?

उस दिन प्राणो के अंचल में
सुख के सुमन तुम्ही ने डाले,
आज तुम्ही उन फूलों पर क्यो फेक रहे अगार ?

निदान—

किरण को रूप का शृंगार यह किसने दिया है ?
सुमन को मधुर मधु का सार यह किसने दिया है ?
कि किसने चूम कलियों के अधर उनको दिया रंग—
पवन को गंध का मृदुभार यह किसने दिया है ?

कि किसके प्राण में या अग्नि जलते हैं सितारे ?
कि किसने चमकाकर धधका दिए रवि-शशि अंगारे ?
कि बनकर कौन धड़कन हर घड़ी मुस्काता हृदय में—
कि दीपक जिन्दगी का जल रहा किसके सहारे ?

तुम्हीं हो, मन तुम्हें पहचानता है यह - कि मन हो
प्राण ! जीवन हो, जलन हो, जागरण हो,
जग, कि छाया है तुम्हारे अतनु-तनु की—
और तुम अभिव्यक्त हो, लेकिन गहन हो।

लो, तुम्हारा दान है तुमको समर्पित,
मैं स्वयं आहत, स्वयं तुमसे पराजित.
यह तुम्हारे अमर स्वर की गीत-प्रतिध्वनि,—
है नहीं मेरी— तुम्हारा एक इंगित ।

मेरा गीत—

वधु ! मेरा गीत यह, तुम लो ।

और चरणों में तुम्हारे क्या चढ़ादूँ ?
और किस शृंगार मे तुमको सजादूँ ?
भाव-सा भीगा, मधुर मनुहार-सा भी—
वधु । मेरा गीत यह, तुम लो ।

चन्द्रमा ने चाँदनी रातें तुम्हे दीं,
रवि-किरण ने स्वर्ण-बरसातें तुम्हें दी,
दे जिसे कुछ शेष देना रह न जाए—
बंधु ! मेरी प्रीत यह, तुम लो ।

तुम बुलाओ— पास आए विश्व सारा,
तुम पुकारो— जग कहे 'किसने पुकारा ?'
किंतु मै जो हूँ, तुम्हारे ही लिए हूँ—
वधु । मन का मीत यह, तुम लो ।

बंधु ! मेरा गीत यह, तुम लो ।

●

[आकाश-कु

इस बार बहारें लौट गईं तो लौट गईं—

इस बार बहारें लौट गईं तो लौट गईं,
अब जब बसन्त में सुमनों से मधु-गन्ध उठे,
तुम एक बार मुझसे मिलने को आ जाना।

जैसे तैसे दिन बीत गया, सन्ध्या डूबी,
उग आया पश्चिम-नभ पर सन्ध्या का तारा,
मन में उमग भर सोचा— अब तुम आओगे,
मिट जाएगा मेरे जीवन का अँधियारा,
लेकिन मेरे सिंगार पर मुसका कर रजनी,
देखते-देखते आई भी, फिर लौट गई—
यह मिलन-यामिनी लौट गई तो लौट गई,
इस बार गगन जब निशा-पाश में बँध जाए,
तुम एक बार मुझसे मिलने को आ जाना।
इस बार बहारें लौट गईं तो लौट गईं—।

सावन की श्याम-घटाएँ घिर घिर कर आईं,
प्यासी धरती की पुलक बन गई हरियाली,
मैंने सोचा हर ओर जिन्दगी लौट रही,
तुम आओगे भरने मेरी जीवन-प्याली,

लेकिन मेरे अतृप्त प्यार पर रो-गाकर,
सावन की सारी सजल घटाएँ लौट गई—
इस बार घटाएँ लौट गई तो लौट गई,
अब जब बादल धरती से आकर गले मिलें,
तुम एक बार मुझसे मिलने को आ जाना।
इस बार बहारें लौट गई तो लौट गई—।

जब जब फूलों पर शबनम को झुकते देखा,
मै तुम्हे पुकार उठा अपने ही अन जाने,
जब जब जीवन का दर्द सम्हाले नही बना,
चाहा— तुम आओ व्याकुल मन को बहलाने,
पर मेरे ही जीवन ने मुझ पर व्यंग किया,
तुम तक बिन पहुँचे सभी पुकारे लौट गई—
इस बार पुकारें लौट गई तो लौट गई,
लेकिन अब जब मन तुम्हे पुकारे हो अधीर,
तुम एक बार मुझसे मिलने को आ जाना।

इस बार बहारें लौट गई तो लौट गई,
अब जब बसन्त में सुमनों मे मधु-गन्ध उठे,
तुम एक बार मुझसे मिलने को आ जाना।

एक गगन का तारा टूटा—

एक गगन का तारा टूटा रात रात भर रोई है !
किसको दुनिया पूछी कैसे किसे बताई कोई है !

एक फूल मुस्काया— आया गुलशन में तूफ़ान है
एक शमा जल गई— एक सौ परवाने बलिदान है
जिनके अरमानों के शोले, यादों के अंगार हों—
उन सपनों के दीवाने का जीना क्या आसान है ?
सीनों में बच नहीं पायेगी उसकी किस्मत सोई है !

एक गगन का तारा टूटा

फूलों की गोदी पर पग रख आती नभ में चाँदनी
सागर के सीने पर गाती गीत लहर अनुरागिनी
जिसके जीवन का घर बनाना प्रथम प्रहर में टूट गया—
कैसे काटे यह बेचारा जीवन की यह यामिनी ?
जिसने जीवन की यह थाती जीत जीत कर खोई है !

एक गगन का तारा टूटा

सपने बड़े मधुर हैं लेकिन, सपनों का क्या एतबार ?
इन्तज़ार भी मन बहलाती, लेकिन कब तक इन्तज़ार ?
ये गुलाब के फूल, और ये शबनम बहुत हसीन है—
लेकिन उसको फूलों से क्या जिसका दिल हो तार-तार ?
जिसने जीवन की माला में हर धागा आग पिरोई है !

एक गगन का तारा टूटा

न-गीत—

मैं जीवन का यह गीत अधूरा छोड़ चला
तुम रो रो लिखना इसे नयन के काजल से।

जीवन की हर मंजिल पर नूतन छन्द रचे
हर श्वास नई कल्पना सजा कर लाती थी,
हर धड़कन में हर क्षण उठता था राग नया
जिन्दगी झूमती थी, हसती थी, गाती थी,
पर बीच राह में मेरा जीवन - दीप बुझा
तुम बुझे दीप को रखना ढक कर आँचल में।
मैं जीवन का यह गीत अधूरा छोड़ चला
तुम रो रो लिखना इसे नयन के काजल से।

तुमने जिन प्राणों को प्राणों की छाया दी
वह प्राण-विहग उड चला अजाने पथ में, लो,
तुमने जिस कंचन-वर्ण देह से प्यार किया
वह मिट्टी आज हुई है, तुम आँचल भर लो,
पतझर की हवा चली, जीवन उड़ चला कि लो
पीले पत्ते सा अवश जगत के आँगन से।

[आकाश

मैं जीवन का यह गीत अधूरा छोड़ चला
तुम रो रो लिखना इसे नयन के काजल से।

मुखरित जग की महफ़िल में यह अनविदा आज
मेरा एकाकी, कंपित स्वर भर आता है,
ऐसा लगता— जिस ओर उठे उस ओर तुम्हारे
प्राणों में मेरा स्वर जा टकराता है
पर इस वेला में यह बंधन कैसा, बोलो !—
कितनी छाया की आशा उड़ते बादल में ?

मैं जीवन का यह गीत अधूरा छोड़ चला
तुम रो रो लिखना इसे नयन के काजल से।

●

पर—

हर बार नए पथ से मैं तुमसे दूर गया
हर बार पन्थ पर लेकिन तुम मिल गए मुझे।

तुमसे मिलना कुछ पाप हो गया हो जैसे,
दुनियाँ ने मुझको कदम कदम पर यूँ टोका,
जब हाथ तुम्हारा मेरे हाथों मे आया,
दीवार खड़ी कर दुनियाँ ने वह भी रोका,
लेकिन इन पत्थर-मिट्टी की दीवारों से,
कब प्राणों का अविरल प्रवाह रुक पाया है ?
सूरज-चंदा की स्वर्ण-रजत की किरणों के
हर तार तार पर, हर क्षण, तुम मिल गए मुझे।

हर बार नए पथ से मैं तुमसे दूर गया
हर बार पन्थ पर लेकिन तुम मिल गए मुझे।

तुमसे मिलकर मन भूल गया इस दुनियाँ को
अपराध हो गया,— सहती दुनियाँ यह कैसे ?
पृथ्वी के दो छोरों पर हमको फेंक दिया,
हम कभी, कहीं पर मिल न सकेंगे अब जैसे,

[आकाश-

लेकिन मन से मन दूर हुआ है कब, बोलो !
कब बाँध सका है जग लहराता हुआ प्यार ?--
मैं गाता हूँ, मेरे इन प्यासे गीतों के
हर छन्द, और हर स्वर में तुम मिल गए मुझे।

हर बार नए पथ से मैं तुमसे दूर गया
हर बार पन्थ पर लेकिन तुम मिल गए मुझे।

कहते हैं दुनियाँ बहुत बड़ी है, एक बार
यदि बिछुड़ गए, मिलना मुश्किल हो जाता है,
है राह जिन्दगी की उलझन में भरी हुई,
जो साथी खो जाता है, बस, खो जाता है,
पर मेरे साथ घटी कुछ अद्भुत घटनाएँ
सौ बार तुम्हें खो खोकर मैंने पाया है--
चलते चलते हर बार पन्थ मैं भूल गया
हर डगर डगर पर लेकिन तुम मिल गए मुझे।

हर बार नए पथ से मैं तुमसे दूर गया,
हर बार पन्थ पर लेकिन तुम मिल गए मुझे।

जिन्दगी रूप है, यौवन है—

तुम रोज सुबह पत्थर की पूजा करते हो
सीधी-सादी तुम बात न मानोगे मेरी,
तुम मानो, मत मानो, लेकिन मैं कहता हूँ—
जिन्दगी रूप है, यौवन है, अल्हड़पन है।

तुम सर्ववन्द्य, निष्पाप, निखिल तत्त्वज्ञानी
तुमने वेदों का पारायण सौ बार किया,
तुम जरा-मरण के गूढ़ रहस्यों के ज्ञाता
तुमने शत-शत विमूढ़ जन का उद्धार किया;
तुम रोज सुबह चँदन के तिलक लगाते हो
तुम निश्छल, मधुमय प्यार न माँगोगे मेरा,
तुम माँगो, मत माँगो, लेकिन मैं देता हूँ;—
जिन्दगी प्यार है, ममता है, आमंत्रण है।
जिन्दगी रूप है, यौवन है, अल्हड़पन है

तुम अपने लेखे अजर, अमर, अविनाशी हो,
जीवित मृत हो— यदि मुझसे सच सच पूछो तुम,
तुम अपने लेखे महाशक्ति के स्वामी हो,
कवि के लेखे कुछ विफल, व्यर्थ मिट्टी के कण,

तुम रोज सुबह स्तुति-पाठ गर्व से करते हो
जीवन के मधुमय गीत नहीं तुम गाओगे;
तुम गाओ, मत गाओ, लेकिन मैं गाता हूँ—
ज़िन्दगी रूप का काव्य, प्रीत का गायन हैं।
जिन्दगी रूप है, यौवन है, अल्हड़पन है।

तुमने सौ बार कहा— ये सपने झूठे हैं,
मैंने हर बार कहा— 'सपना ही जीवन है,'
'यह जग मिथ्या है'—तुमने लाखों बार कहा,
मैंने हर बार कहा—'जीवन तो प्रतिक्षण है,'
तुम रोज सुबह पत्थर पर हृदय चढ़ाते हो,
पत्थर के मन ! तुम कोमलता क्या पहिचानो ?
तुम जानो,मत जानो, लेकिन मैं जान गया—
ज़िन्दगी ज्वार है, मादकता है, अर्पण है।
जिन्दगी रूप है,
यौवन है,
अल्हड़पन है।

जिन्दगी से प्यार—

जिन्दगी से प्यार करता जा रहा हूँ,
जो मिला— स्वीकार करता जा रहा हूँ,
हर कदम पर मौत को दी है चुनौती—
हर लहर में ज्वार भरता जा रहा हूँ।

हर सवेरे भैरवी हूँ गुनगुनाता,
हर निशा को दीप आँगन मे सजाता,
रोज लड़ता हूँ अन्धेरे से, अथक मैं—
रोज लेकर ज्योति के कण लौट आता।

मन बहुत सी बार रुकने को हुआ, पर,
ये कदम बढ़ते रहे आगे निरंतर,
आज चलता हूँ कि धरती डोलती है—
सिर उठाता हूँ कि गिरता टूट अम्बर।

श्वास मे मधुमास लेकर चल रहा हूँ,
साथ भू-आकाश लेकर चल रहा हूँ,
जिस जगह ठहरूँ वही मंजिल मिलेगी—
यह अमर विश्वास लेकर चल रहा हूँ।

●

[आ

मोनद]

मंजिल तक जाने में मेरा तुम थोड़ा साथ निभादो ना !

मैं आसमान के तारे-सा
रजनी के कर से छूट गया,
अधरों तक पहुँच नहीं पाया
हूँ प्याला, गिर कर फूट गया,

तुम मेरे मन का अमृत-रस उन अधरों तक पहुँचादो ना !

भूले अन्तर में सुख-स्मृतियाँ
लेकर कल की दीवाना हूँ,

उजड़ी बहार की याद लिए,
उजड़ा उजड़ा वीराना है;
तुम एक बार मुसका वीराने में मधु-ऋतु लहरादो ना !

लो, डूब रहा है मेरा मन
मेरी अपनी ही श्वासों में,
मैं छला गया हूँ जीवन भर
खुद अपने ही विश्वासों में;
यह घूँट जहर का पी डालूँ, तुम मन मेरा बहलादो ना !

तुम अपनी मुसकानों से प्रिय !
मेरी पहचान करादो ना !

शृङ्गार का शृङ्गार—

आज तुमने सुमन केशों मे सजाकर,
और उनमें सुरभि श्वासो की बसाकर,
सच कहूँ— है कर दिया शृंगार का शृंगार ।

आज तुमने पास मे मुझको बुलाकर,
लाज मे डूबी हुई नज़रें उठाकर,
खीचकर कुछ और अपने पास मुझको—
चूमकर मेरे अधर पर रख दिया अँगार ।

जब तुम्हारी दृष्टि ने मुझको पुकारा,
यूँ लगा— जैसे कि मिलना है किनारा,
और मै खिचकर तुम्हारे पास आया—
खो गया मेरा स्वयं ही काँपकर इन्कार ।

आज मै डूबा तुम्हारी चाँदनी मे
खो रहा हूँ होश स्वर की रागिनी मे,
सोचता हूँ— ये अमर हो जाँय घड़ियाँ—
और देखा ही करे ये देखना ससार ।

आज तुमने सुमन केशों मे सजा कर,
और

●

रहस्य—

रक्ताभ तुम्हारे नयनों के रतनारे डोरों में सुन्दरि !
मैने रहस्य के सूत्र सृष्टि के खोज लिए हैं अनजाने ।
आज तुम्हें देखा— देखा मै खिंचा आ रहा हूँ बेबस,
अस्पर्श्य तुम्हारे प्रखर रूप की ज्वाला मे जलने हँस हँस,
यह अपने मन की लगन, और यह जलन प्राण की जब देखी—
मैं जान गया जलने आते क्यों छली शमा पर परवाने ।
रक्ताभ तुम्हारे नयनों के...

तुमने आँखों की भाषा में कह डाली एक कहानी-सी,
यूँ लगा कि जैसे तुम मेरी युग युग की हो पहचानी-सी,
मैं एक तुम्हारी चितवन पर लुटकर आखिर यह जान गया—
क्यों प्यार भरी पागल पुकार पर मर मिट जाते दीवाने ।
रक्ताभ तुम्हारे नयनों के...

मन चला तुम्हारी ओर, कि जैसे लहर चांद की ओर चले,
मन गला तुम्हारी स्पर्श-अग्नि से, ज्यो आतप से हिम पिघले,
मन सजा तुम्हारी मुसकानों से, और सहज मै जान गया—
कैसे मधु-ऋतु के सुमनों से सज उठते होंगे वीराने ।
रक्ताभ तुम्हारे नयनों के...

[आकाश-कुसुम

गगन से उतरकर—

दिया जिन्दगी भर निमन्त्रण तुम्हें, पर,
कभी तुम न आए गगन से उतरकर।

संदेसे स्वरों के पवन के सहारे,
थका भेजकर मैं, न मधुमास आया,
कटी जिन्दगी यूँ— कि बस कट गई है,
निशा ने सुलाया, उषा ने जगाया,
रहे पन्थ पर ही भटकते चरण ये
किसी ने न पूछा कि मंजिल किधर है—
तुम्हारे चरण की प्रतिध्वनि सुनी, पर
बढ़ूँ मैं कि घन-शून्य में खो गए स्वर।
दिया जिन्दगी भर निमन्त्रण तुम्हें, पर,
कभी तुम न आए गगन से उतरकर।

बड़ी कामना के घरौंदे बनाए
बड़ी भावना के दिये थे जलाए,
क्षितिज से हवा एक ऐसी चली, पर,
घरौंदे गिराए, दिये सब बुझाए,

मगर प्राण का दीप ऐसा जला कुछ
कि छूकर पवन भी जिसे जल रहा है—
सही सब जलन, सोच कर यह, कभी तो
कहोगे कि 'लो आ गए हम', पिघलकर।

दिया जिन्दगी भर निमंत्रण तुम्हें, पर
कभी तुम न आए गगन से उतरकर।

कहाँ, किस नयन से उलझ तुम गए हो
कि सब लौटती ये चली है बहारें,
कहो, किस डगर पर भटक तुम गए हो
कि सब शून्य मे खो रही हैं पुकारें,
मगर कामना छोड़ती है न दामन
हर इक स्वप्न में है तुम्ही को बुलाती—
विवश प्राण ऐसे हुए कुछ कि तुम ही
हर इक कल्पना में उभरते उफनकर।

दिया जिन्दगी भर निमत्रण तुम्है, पर
कभी तुम न आए गगन से उतर कर।

सांध्य-तारा—

सांध्य-तारा आ गया पश्चिम गगन पर
काश ! तुम भी आज मेरे पास होते !

साँझ का तारा, कि जैसे प्यार निशि का
रोज नभ की गोद में आ मुस्कराता,
बाँध लेता नभ निशा को भुज-युगल में
चाँदनी का गात निशि का काँप जाना,
देखता हूँ रोज दिल को थाम कर मैं
देख कर दिल थाम लेता हूँ कि मुझमें—
कौन सा अपराध ऐसा बन पड़ा है
जो कि इतना रुष्ट है मुझसे विधाता ?
देखने को शून्यता की यह विकलता
काश ! तुम भी आज मेरे पास होते !
सांध्य-तारा आ गया पश्चिम गगन पर

साँझ की रँगीनियों की मुस्कराहट
आसमाँ की हर नजर पर छा गई है,
एक अनदेखे किसी संसार से आ
बाँसुरी की धुन कहीं कुछ गा गई है,

ग्रौर इन तनहाइयों में गीत के स्वर
क्या कहूँ उन्माद कैसा दे चले है—
क्या कहूँ किस चाँद की, किस चाँदनी की
याद एकाएक मुझको आ गई है;
काश ! ऐसे वक्त तुम आते कहीं से
पास मेरे, दीप तारों के सँजोते।
साँध्य-तारा आ गया पश्चिम गगन पर.. ......

आज पश्चिम के गगन की गोद में यह
साँझ का तारा न जाने क्यों विकल है ?
आज बिन गाए कहीं भी गीत कोई
सो गया चुपचाप सारा विहग-दल है,
आज क्यों मुझको विवश मेरी कहानी
एक अरसे बाद भूली याद आई—
या कि मैं यूँ ही वहकता जा रहा हूँ,
और जो कुछ सोचता हूँ— एक छल है ?
आह, देखो साँध्य-तारा डूबता अब जा रहा है,
काश ! तुम भी आज आ मुझको डुबोते !
साँध्य-तारा आ गया पश्चिम गगन पर,
काश ! तुम भी आज मेरे पास होते !

वसन्त और मेरा मन—

ऋतु वसन्त में नभ में उड़ते शुभ्र, श्वेत, हलके बादल-सा
भटक रहा मेरा निराश मन।
साँझ पड़े घर आते, शर से विद्ध किसी चीखते विहग-सा
चीख रहा मेरा निराश मन।

बादल उड़ता ही जाता है
और डूबता जाता है मन,
पवन गंध—बोझिल टकराती
आकर, जल उठता सारा तन,
इस व्यापक, विशाल अम्बर की चिर-आकुल अनबुझी प्यास-सा
प्यासा प्यासा रे मेरा मन।

है वसन्त, पर, घेर सृष्टि को
जैसे छाया है सूनापन,
मन उमग से उठता है, पर,
है उमग भी उन्मन उन्मन,
इन शाखों पर, इन फूलों के प्राणहीन, निर्जीव हास-सा
रो रो कर हँसता मेरा मन।

वसन्त और मेरा मन

एक अजानी-सी पुकार-सी
जैसे या गुजरी मल्हार में,
एक दर्द की टीस हृदय से उठ,
खो जाती है अम्बर में,
किन्हीं अश्रुआतुर नयनों की भीगी भीगी सी पलकों-सा
डूबा डूबा रे मेरा मन!
उफ़! वसन्त की मादकता में जलता जलता सा मेरा मन!

●

कितनी बार भुलाती दुनिया बीत गए मधु के मौसम को
लौट लौट कर सुमन सँजोता किन्तु वही फिर आ जाता है
उसी तरह मैं तुम्हें भुलाता सौ सौ बार हृदय में रगिरगि।
याद तुम्हारी आ ही जाती, एक नशा-सा छा जाता है।
और वही उन्माद लिए मैं गाता गीत तुम्हारे-मेरे
रोज सजाना और मिटाना सुख-सपनों को साँझ-सवेरे,
तुम्हें शुक्रिया प्राण ! कि तुम हो जो यह दर्द मुझे दे पाए—
जो मेरी साँसों में सिंचित, जो मेरे प्राणों को घेरे।

तुमने यह जो विरह-मिलन का स्वप्न जाल सा गूँथ दिया है
तुमने कभी न जाना उसमें घिर आया कितना आकर्षण,
सपनों की भिलमिल छाया में तुम जो सच-से आ जाते हो—
यह कितना अद्भुत है, यह तुम कभी न जानोगे हे मधु-मन !
इसमें क्या, कि तुम्हें मेरी सुधि आती है, कि नहीं आती है !
इसमें क्या, कि शलभ जब जलता बाती भी जलती जाती है !
यही बहुत है मुझे, कि जैसे मधु का मौसम फिर फिर आता—
मैं सौ बार तुम्हें बिसराता, पर, फिर फिर सुधि आ जाती है।

कितनी बार भुलाती दुनिया
बीत गए मधु के मौसम को . !

●

मेरा गीत, तुम्हारा गुनाह—

गीत मैंने तुम्हारे लिखे हैं, मगर,
गीत बनने की तुम ही गुनहगार हो।

ये सही है कि मैं आज बेभान हूँ,
और मन की लहर पर उठा ज्वार है,
किन्तु तुम चांद बनकर हँसी जब प्रिये !
क्यों स्वयं पर मुझे आज अधिकार हो

ये नशीले नयन, ये लजीली हँसी,
ये गुलाबों की महफिल लिए तुम चलीं,
चौंक कर मैं जरा सा ठहर ही गया,
क्या करूँ जब तुम्हें खुद न इन्कार हो

मैं खिचा आ रहा हूँ प्रणय-डोर से,
मैं विंधा आ रहा हूँ नयन-कोर से,
प्राण ! लाचार हूँ, पाँव रुकते नहीं;
क्यों बुलाती मुझे पास हर बार हो

गीत मैंने तुम्हारे लिखे हैं,
गीत बनने की तुम ही गुनहगा

अधिकार—

अधिकार तुम्हारा या मेरा इस जीवन पर ?

श्वासें मेरी, यह निश्चित है,
पर श्वासों का क्रम तुम ही हो,
दिल मेरा है मालूम मुझे,
पर दिल की धड़कन तुम ही हो
जब जीवन की गति ही तुम हो—

अधिकार तुम्हारा, या मेरा, इस जीवन पर ?

सपने मेरी आँखों के, पर,
सपनों में तुम साकार सदा
जीवन मेरा, पर, जीवन की
तुम ही आशा— आधार सदा,
जब जीवन का आधार तुम्ही—

अधिकार तुम्हारा, या मेरा, इस जीवन पर ?

अभिलाषाएँ मेरी, पर,
अभिलाषाओं में तुम ही तुम हो,

मेरे ही गीत, किन्तु गीतों के
भावों में सब ही तुम हो;
जब मन में तुम, चाहों में तुम—
अधिकार तुम्हारा, या मेरा, इस जीवन पर ?

जब तुम आए, तुम पर हँस हँस
बलिहार हुआ मन दीवाना,
तुम गए, तभी से जीवन ने
शृंगार नहीं कोई जाना,
जब जीवन का शृंगार तुम्हीं—
अधिकार तुम्हारा, या मेरा, इस जीवन पर ?

●

बहुत प्यार है —

जो भटकती रही ज्वार में बेसहारे
मुझे उस लहर से बहुत प्यार है।
जो उठी चाँद की ओर, उठकर गिरी भी,
मुझे उस लहर से बहुत प्यार है।

काफिला जिन्दगी का चला ही किया
कब रुके, कब थके काल के युग-चरण?
श्वास चलती रही, दिल धड़कते रहे,
रोज आईं-गईं सूर्य-शशि की किरण;
अर्थ यह है कि आकाश की छाँह में
जो जिसे चाहता था उसे पा सका—
जो मचलती रही मंजिलों के लिए नित
मुझे उस डगर से बहुत प्यार है।
जो भटकती रही ज्वार में बेसहारे...

उम्र भर सोचता मैं रहा एक ऐसी
धरा हो, जहाँ फूल हों, प्यार हो,
एक ही चाह है—एक चुम्बन मिले
जो दहकता हुआ एक अंगार हो;

सुधि का स्वप्न—

तुम आतीं सुधि की शत स्वर्ण-लहरियों पर तिर
जैसे नभ का चाँद रश्मियों से घिर आता,
त्यों सज उठता विवश विकल प्राणों का मन्दिर
जैसे बाग बहारों से बेबस खिल जाता।

मै अलक्ष्य सौ सौ सुमनों के हार बनाता
जब अन्तर पूजा के भावों से भर जाता,
जब पूजा के भाव भनक उठते कंपित हो,
मै चरणों में बिखरे—सुधरे गीत चढ़ाता।

लगता—छू देतीं गीतों को, इन हारो को,
पुण्य परस वह चाह अमर मेरी कर जाता,
ज्यों सावन में मेघ घुमड़ घिर घिर छा जाएँ
अन्तर सौ सौ सुख-सपनों से भर भर जाता।

●

[आकाश-कुसु

सपनों के बादल—

सुबह सुबह घिर घिर आए हैं
देखो, ये सपनों के बादल।

दूर बहुत तुम आज गए हो
सीमा से मेरी बाँहो की,
लहरें, पर, उठती आती है
अभिलाषाओं की, चाहों की,
बहुत मनाता हूँ मन को
मत याद करे बीती बातें—
बादल आते, आ जाता याद
किसी के नयनों का काजल।

सुबह सुबह घिर घिर आ
देखो, ये सपनों के बा

ऐसा लगता आज कि जैसे
तुम मुझसे मिलने आई हो,
यह प्रभात का पवन तुम्हारी
साँसों की ही गरमाई हो,

[आशा

]

तुम बिजली की ओट लिए
जैसे चंचल, मिलनातुर हो—
यह बूँद बूँद जो बरस रही
हो जैसे नयनों का ही जल।

मुबह सुबह घिर घिर आये हैं
देखो, ये सपनो के बादल।

बहुत काल बीता, जब तुमने
इस मन का शृङ्गार किया था,
अपने प्राणों से भी बढ़कर
इन प्राणों से प्यार किया था,
आज गगन में बादल, मन में
याद तुम्हारी जब छाई है,
क्या आश्चर्य किसी का ऐसे में
यदि हो जाए मन घायल ?

सुबह सुबह घिर घिर आए है
देखो, ये सपनो के बादल !

●

देख आसमान पर—

देख आसमान पर छा गया खुमार है
चाँद आ गया सखी ! चाँदनी मचल गई;
द्वार द्वार नेह के सजल प्रदीप जल गए
लाज से अरुण हुई निराश शाम ढल गई।

कौन बाँसुरी की धुन पै मिलन-गीत गा रहा ?
मुँद चली थी आँख कुछ, कौन ये जगा रहा ?
किसको आज तीर पर मेरा इन्तजार है ?
मीठी मीठी धुन सुना क्यों मुझे बुला रहा ?
चाह एक उठ गई, उठ के दिल मसल गई।
चाँद आ गया सखी ! चाँदनी मचल गई।

रात थम गई है अब, श्वास में पुकार है,
सो रहा जगत मगर जागता दुलार है,
तारकों की टोलियाँ झूमने लगी मगन—
थिरक थिरक के यामिनी बजा रही सितार है,
बाग की बहार मे ये बहार मिल गई।
चाँद आ गया सखी ! चाँदनी मचल गई।

[आकाश-कुसुम

आज प्राण में प्रिये ! नवीन सा हुलास है,
आज प्राण पर बिखर रहा मधुर प्रकाश है,
प्रसन्न प्यार कह रहा कि आज मौन तोड़ दो—
आज अधर में बसी नवीन एक प्यास है;
पुकार पवन जो उठा कली विहँस के खिल गई।
चाँद आ गया सखी ! चाँदनी मचल गई।

रात ढल चली है अब, चाँद डूबने लगा,
आँख गल चली है अब, चाँद डूबने लगा,
प्यार में पले पले अनन्त दीप बुझ चले,
आग जल चली है अब, चाँद डूबने लगा,
सृष्टि बन गई अभी,—अभी मगर बदल गई।
चाँद ढल गया सखी ! चाँदनी चली गई।

देख आसमान पर अब नहीं खुमार है—
चाँद ढल गया सखी !

●

रात की मेहमान—

आज रजनी ने सजाए दीप-तारक
आज तुम इस रात की मेहमान हो क्या ?

आज कुन्दन-सी दमकती देह वाला
चाँद खुश है बहुत, जाने राज़ क्या है !
सुन जिसे बेहोश होता जा रहा हूँ
कौन जाने वह मधुर आवाज क्या है !
आज फूला फिर रहा है शशि गगन मे
प्रिय ! तुम्हीं इस चाँद का अभिमान हो क्या ?
आज तुम इस रात की मेहमान हो क्या ?

रेशमी किरणें बढाकर आज नभ में
चाँदनी यह धो रही किसके चरण है ?
आज के उन्माद का यह ज्वार जाने
क्यों उठा, क्यों विकल है, किसकी शरण है ?
यह तुम्हीं हो जो कि नभ पर छा रही हो,
तुम्ही अपने असर से अनजान हो क्या ?
आज तुम इस रात की मेहमान हो क्या ?

[आकाश-कुसुम

मैं गगन की छाँह में निश्छल पड़ा हूँ
सुन रहा हूँ ध्वनि तुम्हारे नूपुरों की,
मूर्च्छना में डूबता मन जा रहा है
बहुत तीखी है सुरा इन मधु-स्वरों की,
यह कि जो मुझको बुलाए जा रही है—
तुम्हीं मेरी चिर-अमर पहचान हो क्या ?

आज रजनी ने सजाए दीप-तारक
आज तुम इस रात की मेहमान हो क्या ?

स्वर की पुकार—

चीरकर आकाश की निस्तब्धता यह
किस विरह-व्याकुल विहग का है उठा स्वर ?

मौन की 'पीड़ा मुखर-सी हो चली है
दर्द के वातास में तूफान आया,
हिल उठा इस छोर से उस छोर तक नभ
वेदना का ज्वार सागर ने उठाया;
किस विमूर्च्छित प्राण की यह कसक है जो—
भेदती ही जा रही है अवनि-अम्बर ?

चीर कर आकाश की निस्तब्धता यह
किस विरह-व्याकुल विहग का है उठा स्वर ?

किस विकल मधु पात्र से आसव ढला यह
मुग्ध है, बेभान है, मधुसिक्त है मन,
किस अनल-अंगार ने मुझको दिया छू
दग्ध है, उत्तप्त है, संतप्त है मन;
कौन सूनी आँख के आकाश में यह
स्वप्न के रंग आज फिर से है रहा भर ?

[आकाश-कु

प्यार की बात—

प्रिय ! तुम्हारे प्यार की क्या बात है !

डूबता ही जा रहा हूँ मुग्ध-मन में,
भूलता ही जा रहा हूँ जागरण मे,
और सुध-बुध भूलकर मै खुश बहुत हूँ
यह अनूठा हृदय पर आघात है !
प्रिय ! तुम्हारे प्यार की क्या बात है !

प्राण मे बरबस समाए जा रहे हो,
प्रीत की धुन गुनगुनाए जा रहे हो,
गगन में मन के घिरे हो तुम घटा-से
स्वप्न मे मधु-मिलन की बरसात है।
प्रिय ! तुम्हारे प्यार की क्या बात है !

जीतते हर दाँव तुम ही जा रहे हो,
दूर हो तुम, पास भी, पर, आ रहे हो,
और मै खुश हूँ कि तुमसे हारता हूँ
जीत है मेरी, कि मेरी मात है।
प्रिय ! तुम्हारे प्यार की क्या बात है

[आकाश-कुसु
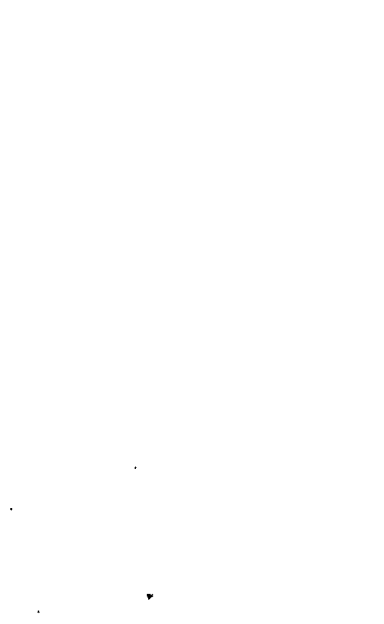
प्रणय-पंथ पर—

प्रणय-पंथ पर
मन उमंग-सा बढता, भय-सा रुक जाता है
सहम, सकुच कर ।

किसी नयन की कोर खींचती
किसी प्राण की डोर,
किसी प्राण की वशी वजकर
करती भाव - विभोर,
सुधि खो जाती तन की, मन की, रह जाते कुछ तार
उलझ कर
प्रणय पथ-पर ।

ठोकर खाकर उसी राह में
बढते चरण अधीर,
मंजिल के सामने हारकर
रह जाती तकदीर;
फिर कुछ टूटे सपने लेकर मन सो जाता है
जल जल कर
प्रणय पथ-पर ।

मन उमंग - सा बढ़ता
भय-सा रुक जाता है
सहम, सकुच कर ।

[आकाश-
छियालीस]

मन कहता है— गलत नहीं है,
रुक न प्राण! यह राह नहीं है,
आ, कोई अवरोध नहीं है,

देख, लहर तट के भुज बन्धन
में बँधने आई पुकार कर।—

आ सिंगार कर, मुझे प्यार कर।
मत विचार कर।

●

गीत स्वयं ही आ जाता है–

गायक हूँ, मेरे अधरों पर गीत स्वयं ही आ जाता है।

अरे घटाओं को रोको, जो झूम झूम आती सावन में,
कोकिल से कहदो कि न कूके मादक पचम से कानन में
शबनम से कहदो कलियों के अधर चूमने कभी न आए—
चँदा से पूछो क्यों जाता झाँक झाँक मेरे आँगन में ?
इनको रोक न पाए तुम तो कवि का कँठ दबाने आए
रुक न सकूँगा, देखो नभ में गाते चाँद-सितारे आए,
आँखों में खुमार थोड़ा सा इन्हें देख आ ही जाता है।

गायक हूँ, मेरे अधरों पर
गीत स्वयं ही आ जाता है।

कभी कभी मैं सीख मान कर अपनों की, चुप हो जाता हूँ,
यही सोचकर– वे ज्ञानी है, पर फिर रोक नहीं पाता हूँ
ज्वार हृदय का रुक जाने पर नये वेग से उठ आता है—
मुझे भान कैसे हो मस्ती में मैं क्या क्या कुछ गाता हूँ ?
कवि अपने कोमल भावों को कैसे जंजीरें पहिनादे ?—
नभ चुम्बी रंगीन कल्पनाओं को कैसे भू पर लादे ?

गीत स्वयं ही आ जाता है

मत पूछो तो जग का कोई बन्धन मुझे नहीं भाता है।

गायक हूँ, मेरे अधरों पर
गीत स्वयं ही आ जाता है।

अभी एक दिन तुम कहते थे— नभ के दीप बुझाने होंगे,
इस धरती पर सुघर, सलोने मृण्मय दीप जलाने होंगे,
तुमने कहा— कि इस धरती पर सूख रही है जीवन-धारा—
स्वप्न भूल कर स्वर्गों के आँसू आज बहाने होंगे;
जगती की पीड़ा दुलराने मेरा प्यार मचल उठता है—
'मधु पी लो' कह देता हूँ, उपचार यही मुझको आता है।

गायक हूँ, मेरे अधरों पर
गीत स्वयं ही आ जाता है।

मैं तब तक गाऊँगा— जब तक नभ में चाँद-सितारे गाते,
मैं तब तक झूमूँगा— जब तक बादल झूम झूम कर आते,
मैं अपने मधु के प्यालों को नहीं हटाऊँगा अधरों से—
जब तक कलियों के रस-सागर-गागर रिक्त नहीं हो जाते,
इतना रखना याद, कि मधु का मधुपी से संबंध अमर है,
कवि जीवित रहता है,जब तक जीवित उसका मधुमय स्वर है
गीतों का गायक के उर से अमर, अमिट, अद्भुत नाता है।

गायक हूँ, मेरे अधरों पर
गीत स्वयं ही आ जाता है।

प्यार का अपराध—

'आदमी की ज़िन्दगी है प्यार करने के लिए,'
तुम भी कहोगे— ठीक है यह बात।
किन्तु पथ मेरा-तुम्हारा
दूर हो जाता—
कि जब तुम प्यार को कुछ दायरों में बाँट देते हो।
मगर मैं चीख कर कहता—
कि मेरा प्यार तो निस्सीम है...
सीमा नहीं है प्यार की कोई, कहीं पर।
आदमी हूँ,
आदमी की ज़िन्दगी सीमित नहीं है,
आदमी का प्यार भी बन्धन-रहित है
एक पारावार...
विस्तृत...
लहर पर लहरें उठाता
जो मिला— अपना बनाता।
तुम बहुत नाराज हो मुझसे
कि मैं बँधता नहीं हूँ,

तुम मुझे यह दोष देते हो
कि मै चंचल बहुत हूँ,
तुम्हे मुझसे है शिकायत—
मै सभी को प्यार करने दौडता हूँ।

. .. ..

सत्य है, सब सत्य है;—
मै मानता हूँ—
मै कही बँधता नही हूँ
यह, कि मै चंचल बहुत हूँ,
और सबको प्यार करने दौडता हूँ।
क्या करूँ लेकिन ?...
वही इन्सान ही तो हूँ अभागा
जो कि हर प्यासी नज़र को प्यार करता है हृदय से,
और,
जो सीमा नही स्वीकार करता प्यार की है।
और—
कुछ इन्सान की लाचारियाँ है,
यह, कि वह इन्सान ही है, देवता हरगिज नही है।
आदमी की देह मे है रक्त
लेकिन देवता पाषाण का है।
आदमी की जिन्दगी है उस शलभ-सी
जो कि हर जलती शमा से

प्यार करना जानता है।
ख़ैर, तुम यह बात मानोगे नहीं।
तुम कहोगे—प्यार जो मैंने किया तुमको
बड़ा अपराध है।
ठीक है, यदि प्यार भी अपराध है
तो मैं तुम्हारे सामने हूँ
दंड दो मुझको—
मुझे स्वीकार है।

गीत—

हर बार तुम्हारा द्वार मिला
हर बार अधूरा रहा मिलन।

मैं प्राण ! वसन्ती-वेला में
मधु-याम खोजता फिरता था,
उन सूनी घड़ियों में किसका
आँचल मुझ पर आ घिरता था ?
उस लहराते आँचल की मधुमय
इन्द्र धनुष की छाया मे—
हर बार तुम्हारा प्यार मिला
हर बार प्यार मे मिली जलन।

जीवन का दर्द न सम्हला जब
मैने पीड़ा का स्वर गाया,
सपनों की किरणों मे बँधकर—
आ, तुमने मन को बहलाया;
सुख-दुख की बनती-मिटती इस
जीवन की चँचल बगिया में—

हर बार स्वप्न के फूल खिले
हर बार जल गए भाव-सुमन ।

यूँ लगता है जैसे जीवन का
आदि तुम्ही हो, अन्त तुम्ही,
ज्यूँ मन के भीतर भी तुम हो
पर मन से दूर अनन्त तुम्ही,

पाकर खोने, खोकर फिर पाने
की इस आँख-मिचौनी मे—

हर बार पुकारा मजिल ने
हर बार राह मे रुके चरण ।

हर बार तुम्हारा द्वार मिला
हर बार अधूरा रहा मिलन ।

●

तुम्हारे जीवन का मधुमास—

तुम्हे सौ बार मुबारक, प्राण !
तुम्हारे जीवन का मधुमास ।

उमग आया धरती का प्यार,
खिल गया फूलों का संसार,
कली के उर का उमडा ज्वार—
सुमन मे बन सौरभ-संसार,

हँस रहा सबका जीवन आज
बस रहे सब उजडे आवास ।

तुम्हे सौ बार मुबारक, प्राण !
तुम्हारे जीवन का मधुमास ।

आज कलि मग्न, पवन बेभान,
भूमि पर प्रीत, गगन मे गान,
सरित मे लहर,— लहर अनजान,
आज बेसुध रे । बेसुध प्राण;

[आकाश कुसुम

छप्पन]

घुल गया जीवन में मधु आज
किसी का बोल रहा विश्वास।
तुम्हें सौ बार मुबारक, प्राण !
तुम्हारे जीवन का मधुमास।

किन्तु मन ! तू क्यों आज उदास ?
कौन सी स्मृति है ? किसकी आस ?
जलन यह कैसी ? कैसी प्यास ?
घिरा क्यों नयनों का आकाश ?
भूल मन ! अपनी पीडा, देख—
खिला उनके अधरों पर हास।
तुम्हें सौ बार मुबारक, प्राण !
तुम्हारे जीवन का मधुमास।

●

आज मन की किरन—

आज मन की किरन, चूमने को गगन,
फिर उठी है सजन ! लो उठाओ नयन।

रात ऐसी घिरी थी कि बेवस नयन की
पुतलियाँ हुई बन्द, पलकें झुकी,
बात ऐसी हुई कुछ कि चलते हुए
दर्द जो मिल गया, धड़कने तब रुकी,
क्या बताऊँ तुम्हे मै कि मेरे गगन का
खिला चाँद कब डूबने था लगा ?
क्यों बताऊँ तुम्हें मै कि जब तुम गए,
ज़िन्दगी ही से मन ऊबने था लगा ?
उस अँधेरी निशा की कहानी तुम्हे
क्या बताऊँ सजन ! जो हुआ सो हुआ—
भूलना चाहता बात बीती हुई,
भूलना चाहता हूँ हृदय की जलन।

आज मन की किरन, चूमने को गगन,
फिर उठी है सजन ! लो उठाओ नयन।

[आकाश-कुसुम

स्नेह देकर कोई भी उजारे मुझे;
और सब उस क्षितिज पर गगन-घन-घने,
दामिनी-सी तुम्हारी हँसी जो गिरी—
देखकर सोचता हूँ कि तुम आ रहे हो...
कि तुम आ रहे हो मेरे प्राणधन !...

आज मन की किरन, चूमने को गगन,
फिर उठी है सजन ! लो उठाओ नयन ।

प्यार चाहिए मुझे—

प्यार चाहिए मुझे, प्यार चाहिए मुझे।

जिन्दगी अनन्त है, न आदि है न अन्त है,
बड़ी प्रशस्त राह है, बड़ा विशाल पन्थ है
कि हार कर कहीं चरण रुकें न, इसलिए मुझे
कि भीग कर कहीं नयन झुकें न, इसलिए मुझे
कि मन बड़ा अजान है कहीं न आस छोड़ दे,
निराश होके जिन्दगी का स्नेह-स्रोत मोड़ दे
इसलिए कि जब कभी समुद्र में लहर उठे—
सम्भाल जो सके सदा
दुलार चाहिए मुझे।

प्यार चाहिए मुझे प्यार चाहिए मुझे।

अँधकार चीरकर प्रदीप एक जल रहा
कि एक ही लगन लिए मुदित, मगन पिघल रहा
कि एक अग्नि की जलन सिहर सिहर सुला रही—
एक कामना लिए शलभ अधीर चल रहा

प्यार चाहिए मुझे

क्या कमाल है कि मौत गढ रही है जिन्दगी,
खूब है कि बुझ रही है, बढ़ रही है जिन्दगी ;
एक है अदृश्य, सूक्ष्म कुछ कि जो बुला रहा,
और सब जलन भुला हृदय उसे पुकारता—
मैं अनन्त वार मृत्यु और जिन्दगी सहूँ—
परन्तु वार वार
इतजार चाहिए मुझे ।

प्यार चाहिए मुझे, प्यार चाहिए मुझे ।

अपार रश्मि-जाल जो प्रकाश दे सका नही,
मदिर, मधुर वसन्त को विकास दे सका नही ;
प्राण का हुलास जो मुझे न विश्व से मिला—
बहार लौट भी गई कुसुम न एक भी खिला,
जिन्दगी की राह पर अनन्त कामना लिए,
बहुत चला, बहुत थका, मगर न हम-सफर मिला ;
न चाह अन्य शेष है, कसक न एक भी बची,
चाहता— कि प्राण भी चढा सकूँ पुकार पर—
परन्तु प्यार से भरी
पुकार चाहिए मुझे ।

प्यार चाहिए मुझे, प्यार चाहिए मुझे ।

[आकाश-कुसुम

एक तुम्हारा ही यह मैं हूँ–

हँसी खुशी के इस आलम में जो है, खुश है, मस्त मगन है,
एक तुम्हारा ही यह मैं हूँ– जिसका बोझिल-सा जीवन है।

चारो ओर घिरे आते है ये गुलाब-से सुन्दर चेहरे,
चारो ओर उमड़ती रहती चम्पा की मुसकानें मेरे,
आठो पहर राग-रागिनियाँ कानो मे गुँजित होती है—
सौ सौ बार गगन के पट को कोई रँगता साँझ-सवेरे,
रग बिरगी इस दुनियाँ मे जो हैं, सब रस मे डूबे है—
एक तुम्हारा ही यह मैं हूँ–जिसका डूब गया यह मन है।
हँसी खुशी के इस आलम मे...

बैठ पवन के चँचल रथ पर भरते पँछी मुक्त उड़ानें,
खुला प्यार लेकर चलती है सरिता सागर से मिल जाने,
कही किरन के पथ मे बाधा आती नही, गगन पर छाती–
आते है बेरोक शमा को चूम झुलसने को परवाने ;
गरज, हमारी इस दुनियाँ मे जो जिसको भाता करता है–
एक तुम्हारा ही यह मै हूँ– जिसकी साँसो पर बन्धन है।
हँसी खुशी के इस आलम है.

[आकाश-कुसु

मेरा और तुम्हारा राज—

मेरे मन की बात न मुझसे पूछो तुम,
राज तुम्हारे मन का भी खुल जायगा।

खेल चुका हूँ मै जिन जिन अंगारों से,
अग्नि तुम्हारी ही उनमे उफनाती थी,
डूब चूका हूँ मै जितनी भी लहरो में,
लहर तुम्हारी ही उनमे वलखाती थी;

जैसे चदा जहाँ गया--- चाँदनी गई,
वैसे ही तुम साथ रही मेरे हरदम—
याद करोगी मेरी गुजरी बातो को,
घाव तुम्हारा भी देखो घुल जाएगा।
मेरे मन की बात न मुझसे पूछो तुम
राज तुम्हारे मन का भी खुल जाएगा

जितनी बार प्यास से मेरे प्राण जले,
तुमने नीलम-नयनों से रस ढार दिया,
जितनी बार भूलकर मजिल में भटका,
अधकार में तुमने दीप उजार दिया;

[आकाश-कुसुम

भोर का गीत—

रात के शृंगार के अवसान पर
कौन प्राणों में जिना गुलगा रहा है ?

झड़ रहे हैं फूल-से नभ के सितारे,
बह रहा है भोर का चंचल पवन भी,
खिल रही कलियाँ नए उल्लास में हैं,
रो रही पर ओस, रोता है गगन भी—
ढल रहा है चाँद—
ढलता जा रहा है।

मिट चले हैं आँख के सपने सुनहले,
माँगने अन्तिम विदा रजनी लगी है,
बुझ चले हैं दीप संध्या से जले जो,
सो चला है प्यार जब दुनियाँ जगी है,
गल रहा है प्राण
गलता जा रहा है।

[आकाश-कुसुम

भोर का गीत

मिल रहे तरुपात हैं रवि की किरण से,
गल जाती है, सवेरा आ रहा है,
कौन पूरब मे पवन की बाँसुरी पर,
भैरवी के स्वर बजाता आ रहा है ?

जल रहा आकाश
जलता जा रहा है।

कौन प्राची मे चिता सुलगा रहा है ?

गीत—

गामने तो हो, मगर कुछ दूर हो,
चाहते भी हो, मगर मजबूर हो।

श्वास के हर तार पर तुम छा रहे,
आँख के हर स्वप्न मे तुम आ रहे,
सुन रहे आवाज मेरी स्वर भरी—
और स्वर की ताल पर तुम गा रहे,
किन्तु यह तो टालने की बात है,
दूर रहकर कह रहे हो— 'साथ है,'
सुन रहे चुपचाप, कुछ तुम भी कहो—
मै करूँ जो कुछ तुम्हे मँजूर हो।
सामने तो हो, मगर कुछ दूर हो।

ये तुम्हारी और मेरी जिन्दगी
गीत की इस लहर पर लहरा रही,
ये तुम्हारी और मेरी धडकने
आज मिलकर एक ही धुन गा रही,
किन्तु यह भी जानने की बात है—
आज मै हूँ, और तुम हो, रात है,

[आकाश-

कौन जाने कल यही हों गीत, या,
जिन्दगी भर के लिए नासूर हों।
सामने तो हो, मगर कुछ दूर हो।

तुम नहीं कुछ बोलते तो मैं चला,
फिर न कहना खूब था यह दिल-जला,
फिर न कहना आँख में भर इन्तजार—
आँख से आँसू गिरा, मोती ढला,
मैं तुम्हें आवाज देकर जा रहा,
मैं तुम्हारे ही लिए हूँ—गा रहा,
किन्तु तुम सुनते नहीं, हो बेखबर,
किस नशे में आज तुम मगरूर हो?

सामने तो हो, मगर कुछ दूर हो
चाहते भी हो, मगर मजबूर हो।

●

एक गीत : एक जिन्दगी—

एक जिन्दगी एक गीत से बनी ।

गीतों का व्यापार
सदा चलता रहता है,
सुबह जागकर संध्या को सो जाता जीवन,
किन्तु साँस का आना-जाना
क्या जीवन है ?
बिना जिए जीकर मर जाना
क्या जीवन है ?
नही जिन्दगी यदि न प्रीत से सनी ।

एक जिन्दगी एक गीत से बनी ।

कितना सूना था आकाश
चाँद यदि एक न होता ?
ज्वार न उठता यदि हिलोर ले
क्या सागर था ?
कहाँ शमा जलती
परवाना यदि न जलाता ?
अपना अपना मन
अपना मन-मीत बनाता—
एक जिन्दगी एक मीत से बनी ।

एक जिन्दगी एक गीत से बनी ।

[आकाश-कुसुम

मधुशाला में

मधुशाला में—

हर बार खींच ले जाता है मधुशाला में
साकी की जहरीली आँखों का आमंत्रण।
हर बार चूमता साकी मेरे अधरों को
हर बार धड़क उठती है सीने में धड़कन।

मैं देश-काल की सीमाएँ सब छोड़ यहीं
मधुशाला में सपनों का लोक बसाता हूँ,
मैं अपना और पराया सब कुछ भूल यहीं
कुछ घड़ियों को बस साकी का हो जाता हूँ,
दुनियाँ की भूल-भुलैया में खो जाता है—
मधुशाला में लौटा लाता हूँ मैं जीवन।

हर बार खींच ले जाता है मधुशाला में
साकी की जहरीली आँखों का आमंत्रण।

तुम खड़े किनारे मधु-सरिता के प्यासे हो,
तुम क्या जानो क्या कशिश सुरा में होती है?
तुम, जो कि दर्द की दुनियाँ से हो दूर बहुत
क्या जानो मदिरा कितना दर्द डुबोती है?

मधुशाला में

बस इसीलिए हर सँध्या को मुखरित होता
मदिरालय की कच्ची मिट्टी का वह आँगन।

हर बार खीच ले जाता है मधुशाला मे
साकी की जहरीली आँखों का आमत्रण।

तुम खुशनसीब हो बहुत कि हो बेदाग अभी
तुमको मधु के आकर्षण का कुछ ज्ञान नहीं,
हम है, कि सुरा के संजीवन पर जीवित है
मधु के प्याले से आगे कुछ अरमान नहीं;
अपनी अपनी रुचि ही है, तुम भगवान भजो
हमको प्रिय है अपने साकी की छूम छनन।

हर बार खीच ले जाता है मदिरालय मे
साकी की जहरीली आँखों का आमंत्रण।
हर बार चूमता साकी मेरे अधरो को
हर बार धड़क उठती है सीने मे धड़कन।

बड़ी तमन्ना है—

बड़ी तमन्ना है तुमको आवाज दूँ।

आज बहुत पी डाली, मन बेचैन है,
जीवन का हर दिन अब मुझको रैन है।
आज अचानक बदली नभ पर छा गई,
याद तुम्हारी बिजली सी तड़पा गई
ऐसे में तुम पास नहीं हो जब मेरे—
बड़ी तमन्ना है तुमको आवाज दूँ।

मैं जब जब पीता हूँ दुनिया चीखती
मुझे नशे में दुनिया अन्धी दीखती
मुझको देती जाती दुनिया गालियाँ
मैं पीता ही जाता मधु की प्यालियाँ
कितनी जलन हृदय में मेरे पल रही—
इस पागल दुनिया को क्या अन्दाज दूँ?

मैं शराब के साथ जवानी पी रहा
यही बहाना लेकर अब मैं जी रहा
और नहीं कुछ, मदिरा मेरे पास है
जीने का पर भी क्या कम विश्वास है
मैं हूँ, बस इसलिए, कि मदिरा और है—
तुम्हें छोड़ किसको अपना यह राज दूँ?

बड़ी तमन्ना है तुमको आवाज दूँ।

तुम्हारे प्यार ने—

मेरे जीवन के प्याले मे भरा ज़हर संसार ने,
किन्तु चूम मदिरा कर डाला उसे तुम्हारे प्यार ने।

दुनियाँ दीवानी ने समझा मै मदिरालय जा रहा,
उठते-गिरते, और झूमते गीत सुरा के गा रहा,
जब कि गा रहा था मै अपना दर्द, जगत ने जो दिया,
और मुझे बरबस खीचा था प्राण! तुम्हारे द्वार ने।
मेरे जीवन के प्याले मे ....

माना मै बेहोश हो रहा हूँ, पर क्या यह अपराध है?
जग ने कितना जहर पिलाया,क्या दुनियाँ को याद है?
यह तो तुम मिल गए, बहाना जीने का कुछ मिल गया,
और बाँध ही लिया तुम्हारे निश्छल, मधुर दुलार ने।
मेरे जीवन के प्याले में ....

जब से होश सम्हाला, देखा— पथ मे जग दीवार है,
इसे तोड़ दूं ठोकर से यह मुझको भी अधिकार है,
मैंने जीवन की हर मंजिल पर पाए अंगार, पर,
सुमन बनाया उन्हे तुम्हारी बाहों के मृदु हार ने।
मेरे जीवन के प्याले मे ....

मधु का गीत—

मेरी नस नस मे सुरा छलकती रहती
मैं तो प्रति क्षण बेहोश रहा करता हूँ।

पीकर मै झूम झूम उठता, फिर पीता
मै झूम झूम कर— चूम चूम कर पीता
प्याला न कभी होता है मेरा खाली—
अन्तर का लोहू खीच लिया करता हूँ।

सकेत मुझे करते है दुनियाँ वाले
मेरे जीवन मे जलते दुनियाँ वाले
बदनाम न मादकता हो जाए मेरी—
इसलिए मौत को जीत लिया करता हूँ।

मेरा मदिरालय विश्व बना है सारा
ऊषा का रग ले मैने जिसे सँवारा
मेरी मदिरा है गीत, कल्पना साकी—
स्वर के प्याले मे दान दिया करता हूँ।

निर्द्वन्द लुटाता मै प्राणो की हाला
है मूल्य यही— पीले बस पीने वाला

सतोष यही— झूमे मेरे संग पीकर—
मादकता ही बस मूल्य लिया करता हूँ।

मन्दिर, मस्जिद के देव-देवियों! आओ,
गिरजाघर के भगवान! जरा पी जाओ,
इन्सान धरातल के तुम दूर न बैठो—
मैं सबको मदिरा दान दिया करता हूँ।

मेरे चरणों की गति न बाँध जग पाया,
मैंने मदिरा का गीत सदा ही गाया,
मेरा न कठ यह मौन कभी हो सकता—
मैं जग का बँधन तोड़ दिया करता हूँ।

उपहास सदा दुनियाँ करती है मेरा,
परिहास सदा दुनियाँ करती है मेरा,
पर मतवाले दुनियाँ से कभी न हारे—
मैं उच्छ्वासों के बीच जिया करता हूँ।

मेरी नस नस में सुरा छलकती रहती
मैं तो प्रतिक्षण बेहोश रहा करता हूँ।

❂

तुम मुझसे हो नाराज–

तुम मुझसे हो नाराज कि मैं मधु पीता हूँ,
पर एक बार भी तुमने सोचा नही कि मै—
इस मधु का ही आलम्बन लेकर जीता हूँ।

तुम मेरी मजबूरी कुछ समझ नही पाते,
तुमसे मेरा यह दर्द अभी है अनजाना,
तुम मेरे बहुत पास आए हो प्रिय ! लेकिन—
अफसोस ! कि तुमने मुझे गलत है पहचाना,
तुम नही सोचते– डूब गया मै, हार गया,
मालूम मुझे मै इसी दाँव मे जीता हूँ।
तुम मुझसे हो नाराज कि मैं मधु पीता हूँ।

अपने अपने सबके दिन होते है जग मे,
जब आसमान को छूती है अभिलाषाएँ,
अपना अपना युग एक सभी का होता है
जब जीवन मे छा जाती है शुभ आशाएँ
मेरा भी युग था ; किन्तु आज अफसोस कि अब
कुछ शेष नही है, सिर्फ समय मैं बीता हूँ।
तुम मुझसे हो नाराज कि मै मधु पीता हूँ।

तुम मुझसे हो नाराज

मेरे जीवन में भी बहार थी खिली कभी,
मैंने भी देखा एक सुहाना सपना था,
जीने का एक बहाना मुझको भी था जब
कोई सुन्दर मनवाला मेरा अपना था;
पर बहुत पुरानी बात हो गई यह, अब तो—
मेरे मन का रस सूख चुका है, रीता हूँ।
तुम मुझसे हो नाराज़ कि मैं मधु पीता हूँ।

●

सौ बरस हो उमर–

सौ बरस हो उमर उन मेहरबान की
जो नशा दे गए बिन पिलाए मुझे।

ज़िन्दगी की रुपहली मदिर शाम में
खूब ढाली है मैंने सुरा शबनमी,
होश जितना उधर भूलता मैं गया,
प्यास उतनी इधर है हुई बलवती,
ज़िन्दगी का सहारा बनी जब सुरा,
या सहारा सुरा का बनी ज़िन्दगी—
तब उतर स्वर्ग से मुस्कराते हुए
वो स्वयं मिल गए बिन बुलाए मुझे।

सौ बरस हो उमर उन मेहरबान की
जो नशा दे गए बिन पिलाए मुझे।

बाँधकर चाँदनी बाहुओं में सघन
स्वप्न की छाँह में वो मुझे ले गए,
दो शराबी नयन मुस्करा कर मुझे
सोम - सागर लहरते हुए दे गए,

मन ही तो है–

मैं दीवानों के साथ बहुत खुश रहता हूँ।

उस दिन विधि बाँट रहा था सुख जग को,
दुनियाँ ने माँगे वैभव के सारे सिंगार,
कुछ ने कुबेर की निधि माँगी,
कुछ ने माँगे प्रासाद-महल,
कुछ ने सतरंगे सुन्दर सपने माँग लिए।
मन ही तो है—
कुछ ने सिंहासन को अपना वरदान दिया,
कुछ मुक्ता-माणिक ले आए,
कुछ रूप माँग बेभान हुए–
इन रूपसियों से परिचित ही है आप लोग।
मैं देख रहा था यह बहार,
छीना-झपटी,
मस्ती-खुमार,
मैं देख रहा था चली जा रही
नूतन पर नूतन बहार;
मैं भी कुछ माँगूँ सोच समझ,

मन ही तो है

मेरे भी चंचल चरण हुए—
मैंने ली माँग नियंता से
अनजान जवानी दीवानी,—
मैं दीवानों के साथ बहुत खुश रहता हूँ,
मन ही तो है।

× × × ×

कुछ ने विधि से माँगे— मन्दिर, मस्जिद, गिरजे,
जी, मन्दिर,
सोने की प्रतिमा वाले मन्दिर,
नभ को छूने वाले ऊँचे मन्दिर,
रत्नों की आभा से जगमग मन्दिर;
पर मै छोटा प्राणी मन्दिर मे रहूँ कहाँ ?—
मन्दिर मे तो भगवान रहा करते है ना ?
जी, मन्दिर में इन्सान नही रह सकते है।
औ, मै छोटा प्राणी महलों में भी कैसे जाऊँ ?—
महलों मे तो धनवान रहा करते है ना ?
जी, महलो मे इन्सान नही रह सकते है।
मै क्या लाता ?
मै कहाँ रहूँ ?—
हाँ, एक जगह कुछ और अभी खाली सी थी,
कुछ दीवाने थे,
मस्ती थी,

मस्ती का आलम था लहराता प्यालों में;
मैं देख रहा था यह बहार,
यह मस्ती,
आँखों का खुमार,
ये पायल की चंचल पुकार,
मैं बँधा हुआ सा खिंचा गया—
मेरे अधरों ने आतुर हो
माँगी मधुशाला मस्तानी—
मैं मस्तानों के साथ बहुत खुश रहता हूँ,
मन ही तो है—
मैं दीवानों के साथ बहुत खुश रहता हूँ।

× × × ×

उस दिन विधि बाँट रहा था सुख जग को,
दुनियाँ ने माँगे वैभव के सारे सिंगार,
पर वैभव के सारे सिंगार मिट जाएँगे,
सुन्दरता के सारे चिराग बुझ जाएँगे,
कब तक ढालोगे अरे रूप की यह मदिरा ?—
इस मदिरा के ये चषक सभी ढुल जाएँगे।
ये महल ?—
महल की ईंट ईंट बज जाएगी।
ये शान ?—
ये शान खाक हो जाएगी।

ये मन्दिर ?—
तुमको सोमनाथ है याद नहीं ?—
फिर वही कहानी दुहरा देगा जग।
मैं मांग रहा था क्या मांगूं जो मिटे नहीं,

इन्सान ?
इन्सान नहीं मरता दुनियाँ से मरकर भी,
इन्सान जिया करता है अपने यौवन से,
मैंने मांगा इन्सान— भले यह नादानी।
मैं इन्सानों के साथ बहुत खुश रहता हूँ;

मन ही तो है—
मैं दीवानों के साथ बहुत खुश रहता हूँ।

●

[आकाश-कुसु

रेखाएँ

जाएँ–

समय-सिन्धु पर खींच रहा हूँ
ये जो गीतों की रेखाएँ,
इनमें ऐसी अग्नि भरो— ये चिर-ज्वलन्त हों।
वैसे, चिर-गतिमान काल की
इस अनादि, अनजान राह पर
मेरा जीवन एक चरण का क्षुद्र चिन्ह है,
जो कि किसी क्षण सबल काल की एक फूँक में
उड़ जाएगा।
किन्तु, प्राण मेरे तेजस्वी,
जीवन के अद्भुत प्रकाश से आलोकित जो,
महाकाल के महावक्ष पर
अपनी श्वासों की रेखाओं से निश्चित लिखकर जाएँगे—
यह, कि एक कवि का जीवन क्षुद्र स्वप्न नहीं है जो उड़ जाए,
यह, कि एक कवि की आत्मा में उठे राग की झनकारों से
भूतल पर जीवन जीवित है,
यह, कि एक कवि के प्राणों की जलन जिन्दगी बन जाती है—
जो कि मृत्यु के अँधकार पर

युग युग तक जो जले ज्योति का ऐसा दीपक रख जाती है।
गगन-सिन्धु पर मेरे जीवन की ये लहरें,
गगन-सिन्धु पर मेरे गीतों की रेखाएँ,
अजर-अमर हों—
चिर-जाग्रत हों।

●

विगत की स्मृति में—

शीत का प्रारम्भ है प्रिय !—
दूर के उस देश के पर्वत-शिखर पर
झिलमिलाकर चाँदनी अब चूमती होगी पवन को
और नीली झील के कंपित हृदय पर
चाँद का प्रतिबिम्ब चंचल
खेलता होगा लहर मे ।

और आधी रात की तनहाइयों मे
पास ही जो रजनिगन्धा फूलती थी—
जो तुम्हारी मुक्त अलकों मे उलझकर
भीग जाती थी सुरभि से—
चौंक कर सहमी हुई सी खोजती होगी तुम्हें अब
रात के अन्तिम पहर तक ।

रात की रानी गगन के पंथ से आ
चाँदनी के शुभ्र रथ से,
एक क्षण रुक, देखती होगी शिला वह
जो तुम्हारी और मेरी मुस्कराहट से
सजल धोई गई थी ।

विगत की स्मृति में

रात के अन्तिम प्रहर में,
जब कि सारी सृष्टि सपने देखती है—
झील की लहरें शिला की ओर बढ़कर,
चूमते सुन्दर तुम्हारे चरण दोनों,
जब न तुमको देखती होंगी कहीं भी,
बिखरती होंगी उफनकर ।
और बेसुध मलय का चंचल पवन वह,
जो तुम्हारे शुभ्र अंचल को बिछाकर
दो घड़ी विश्राम करता था विजन में—
आसमाँ के हर सितारे से उलझकर
पूछता होगा कि तुम किस देश में हो ।
... का प्रारम्भ है, प्रिय !
... शिखर पर
होगी पवन को,

उन्माद की एक साँझ—

आसमान के नील-सरोवर में संध्या का लाल कमल
खिल गया,— प्यार मेरे ! —
तुम अब भी दूर कहीं ।
घर लौट रहा हर विकल विहग,
हर विहगी का तन-मन पुलकित
पर, आह ! शून्य अन्तर थामे
मैं देख रहा हूँ पन्थ, और
तुम व्याकुल-मन मजबूर कहीं ।
झुक रही साँझ हर क्षण भू पर,
गहरी होती जाती छाया—
कुछ और घनी होती पीड़ा ।
इस सन्धि-काल में मेरा मन
विद्रोही सा है चीख रहा,
जाने किस ठुकराई आशा से हो निराश ,
इस मिलन क्षणों को मेरा मन
जड़-शून्य बना-सा देख रहा,
जाने किन टूटे सपनों की परछाईं से ,
पर मेरे मन का इस संध्या से क्या परिचय ?—

विद्रोह करे, या शून्य बने, या फिर डूबे—
यह सांझ-सुहागन नाच रही है छूम छनन,
भर सँध्या की गोदी में है बे भान गगन ।

. .. .

मेरा भी मन अब डूब रहा है इस लय मे
मेरे प्राणों मे भी जैसे संध्या गाती,
मेरे नयनों में एक स्वप्न-सा आता है . . —
यह सँध्या देह तुम्हारी बनती जाती है,
यह गगन मुझे अपनी परछाईं सा लगता,
यह मेरी बाहे फैल रहीं—
यह मेरा मन—
उफ ! —मेरा मन ?—

. . . .

यह क्षण भर का सपना कितना उन्मादक था ?—
मैं देख रहा हूँ— आसमान के नील-सरोवर मे
ँध्या का लाल कमल खिल गया—
ार मेरे ! – लेकिन तुम दूर कही ।

●

मुझे नहीं मालूम कि—

मुझे नहीं मालूम कि तुमसे मेरा क्या संबंध सुहासिनि !
बस इतना ही जान सका हूँ—
यह जो नग्न हास-रेखाएँ
तुम अपने मरकत-अधरों से
मेरे इस संतप्त हृदय पर खींच खींच कर
छिप जाती हो—
प्रिय है मुझको ।
यह सच है— इस सघन प्यार की
सुखद, सुहानी, शुभ छाया में
शीतलता है;
यह सच है— भीगी पलकों में सहमी - सी
इस नयन - कोर में
मादकता है;
किन्तु देखता हूँ मैं यह भी—
सुखद प्यार की घन - छाया में तीव्र जलन है
और, कि आँखों की चितवन में
मादकता के साथ जहर भी मिला हुआ है ।
धन्यभाग्य मेरा,

आराग-कुसुम]

[रामानंद

मुझे नहीं मालूम कि

मैं तुमसे
पर अनजाना अधूरा गीत
सपनों को सनवार रहा है— अमर हुआ जाता है बन्धन।
तो, मेरे अनजान अमरते !
मुझे नहीं मालूम कि मेरा तुमसे क्या संबंध हुआ है—
किन्तु, किसी अनजान सूत्र से,
इतना तो मैं जान गया हूँ—
मेरे जीवन की माला में रंग तुम्हारा घुला हुआ है,
मेरे प्राणों के प्राणों में दर्द तुम्हारा लहराता है,
मेरे सपनों के सपनों में स्वप्न तुम्हारा घिर आता है;
और—
कि तुम तो मेरी हो हो।
ओ मेरे गीतों की भाषा !—
मुझे नहीं मालूम कि मेरा तुमसे क्या संबंध जुड़ गया ;—
मुझे नहीं मालूम कि कैसे
तुम मेरे मन को बहला कर
मेरे मन की मीत बन गईं ;
मुझे नहीं मालूम कि तुमने
क्यों जीवन के चौराहे पर
अपने प्राणों की ताक़त से मुझे पुकारा ;
मुझे नहीं मालूम कि कैसे
तुम जो कल तक अनजानी थी—

[आकाश-कुसुम

मैं, तुम, और पवन–

केश-पट मे क्यो उलझता यह चला है पवन ?—
कोई याद ताजा हो रही है ,—
तुम, तुम्हारे कमल - कोमल कर,
कमल की पँखुरियों सी अँगुलियाँ नाजुक
निपट नादान
क्रीडा - निरत, उलझी बाल - जालो मे ;
नयन डूबे— डूबते - से .. मुग्ध नयनो मे ,
हृदय में टीस अनजानी...
यही सब याद आता जा रहा है आज बरबस—
केश - पट मे क्यो उलझता जा रहा है पवन ?

अब पवन मे सुरभि की यह लहर निर्मम..
शुभे ! तुमने खोल दी हैं क्या बँधी अलकें ?
सुरभि का यह तेज झोका
भर गया नासा - पुटों मे, प्राण - मन मे ,
बाँधनी अलकें सुरभि - भीनी, विरहिणी !—
सह नहीं पाता इसे हूँ ,
इसी भी, यह जो हठीला पवन केशो मे उलझता जा रहा है,

] [आकाश-कुसुम

ठीक जैसे तुम उलझती जा रही हो प्राण मे ।

कितना - क्षुब्ध है अब पवन ?
कितने व्यथित इसके प्राण ?—मधुरे !
जलन अपनी विरह - व्याकुल, तप्त साँसो की
इसे तुमने नही दी क्या ?...
मुझे क्यो खीचता है यह...
कहाँ ले जायगा नादान ?...

एक स्केच—

हो गई कुछ देर, जब आषाढ़ के बादल बरस कर
चल दिए हैं— दूर नभ के देश ।
इस चमकती धूप के गोरे बदन को देख कर
तुम याद आई हो,
तुम्हारी रूप - छवि फिर छा गई बेबस नयन में
याद आया है तुम्हारा शुभ्र, सुन्दर वेश ।
धूप में उन्मत्त - सा बांहे उठाए
गा रहा हूँ गीत जो तुमको बहुत प्रिय था कभी

ऐसा सुहाना लग रहा है अब, कि, जैसे—
बाँध कर भुज - बन्धनों में तुम मुझे दुलरा रही हो,
गा रही हो,
श्वास की गरमी हृदय तक आ रही है. ..

"धूप है लेकिन अरे, ये तुम कहाँ हो ?
मैं अधिक उन्मत्त होता जा रहा हूँ—
इस चमकती और गोरी धूप को मैं
तुम समझ कर गा रहा हूँ .. ।

क्या मुझे कुछ हो गया है ?
तुम बताती क्यों नहीं हो ? .
यह, कि यदि तुम दूर हो, तो,
कल्पना में सत्य बनकर क्यों उतरती आ रही हो ?
हो गई कुछ देर जब आषाढ़ के बादल बरस कर
चल दिए हैं दूर नभ के देश,
ये गगन के अंक में छूटी, गिरी, गोरी,
चमकती धूप
मूर्छित हो गई है।

●

प्राण ! तुम्हारे–

प्राण ! तुम्हारे श्वेत कमल सी
इन आँखों में
मधु का कितना ज्वार उमड़ता !
इतना सब कुछ सह पाऊँगा ?
मैं मधुरस का लोभी षट्पद
बैठ तुम्हारे पास
सोचता
क्या इस नन्दन की कलिका को
पावन,
मधुमय,
मैं अपने अमृत अधर के
कलुषित चुम्बन से
छू डालूँ ?
मुझे लग रहा–
युग बीते
मैं बैठ तुम्हारे पास
यही कुछ सोच रहा हूँ।
किन्तु आज यह क्या परिवर्तन ?

प्राण ! तुम्हारे शुभ्र दृगों में
श्वेत कमल से,
मेरी आँखों का रेशम
यह
लाल-लाल सा
क्यों प्रतिबिम्बित ?
सुधा कलश का अमृत
अंगूरी बन आया !
और स्फटिक-पावन कपोल पर
ऊषा का अनुराग लजीला
बिछल पड़ा क्यों ?
हिम-शीतल अधरों पर
यह बिजली की लहरें !
प्राण !
और भी
मेरे उर पर छाया जाता है
यह किसका आत्मनिवेदन ?
इतना सब कुछ सह पाऊँगा ?
प्राण !
तुम्हारे मुग्ध नयन के
मधु-सागर में
सह पाऊँगा ?
प्राण ! तुम्हारे !

का सरगम—

निशा की स्वप्न मे डूबी पलक पर प्रान का चुम्बन,
परस की अग्नि, श्वासो मे मिलन की रेशमी सिहरन,
हृदय से ये उभर आए खुशी की ओस के आँसू—
कि जैसे रुक गई है अब समय की श्वास औ' धडकन।

किसी भीगे नयन का स्वप्न अब उडने लगा नभ मे,
किसी के फूल-से मन पर खिली है भोर-सी आशा
किसी के तन-बदन पर तीर-सी चुभने लगी किरणे—
किसी के प्यार के सगीत को है मिल रही भाषा।

सुहाना हो रहा मौसम, बरसता आग का रेशम
सभी के प्राण है बेसुध कि सुनकर भोर का सरगम
मगर इस मूर्च्छना मे जिन्दगी भी है, मरण भी है—
अँधेरा है, उजाला है, उभरता - डूबता है मन।

बहुत तीखी किसी की दर्द मे डूबी हुई आवाज
पहचानी, उभर कर आ रही है, जल रहे है प्राण
नभ मे जब कि पृथ्वी पर अमृत के कण बरसते है—
मुझी को दर्द का उपहार यह क्यो मिल रहा अनजान ?

[एक सौ सात

मदन

[आकाश-कुसुम

समय की शिला पर—

चला मैं लहू लाल सीने का लेकर,
नए गीत लिखने समय की शिला पर ।

× × ×

कहीं खो गई है बहारें धरा की,
कहीं सो गई है बहारों की सरगम ।
कहीं जिन्दगी का इशारा नहीं है,
जमाने के चेहरे पर छाया है मातम ।
मगर इन नसों में अभी है रवानी,
रहूँगा धरा पर बहारें खिलाकर ।

× ×

चले कारवां जिन्दगी का कहीं पर,
कहीं एक इन्सान चलता नहीं है ।
जले जिन्दगी की मशालें कहीं पर,
कहीं एक दीपक तो जलता नहीं है ।
मगर आग सीने में बाकी बहुत है
रहूँगा बुझे इन दियों को जलाकर ।

× ×

[एक सौ इक्कीस

पवन और किरन—

सुबह के पवन से किरन आ मिली है
चलो पन्थ पर हो गया है उजाला।

सही है ढला चांद, डूबे सितारे,
मगर एक सूरज क्षितिज पर उगा है,
सही है अनेकों सपन बुझ गए है,
मगर जागरण को नया स्वर मिला है,
मैं गा रहा हूँ कि ये गीत जलकर
जगा दे सकल सृष्टि में रुद्र-ज्वाला।

सुबह के पवन से किरण आ मिली है
चलो पन्थ पर हो गया है उजाला।

उड़ो नींद के स्वप्न-विहगो! कि देखो
नई ज़िन्दगी के उतर हम आए
उधर भोर की लालिमा हँस रही है
इधर आदमी के नयन मुस्कराए,
कि देखो गगन की अँधेरी पलक में
किरण ने सुनहला गजल रंग डाला।

पवन और किरन

सुबह के पवन में किरण आ मिली है
चलो पन्थ पर हो गया है उजाला।

प्रगति की दिशा का कि जो भी पथिक है
उसे गीत मेरा तड़प कर बुलाता,
कि जो भी चरण पन्थ पर बढ़ रहे हैं
उन्हें प्राण मेरा प्रणति है चढ़ाता;
जहाँ मृत्यु से जिन्दगी लड़ रही है
वहीं प्यार मेरा जगत से निराला।

सुबह के पवन में किरण आ मिली है
चलो, पन्थ पर हो गया है उजाला।

●

पवन और हिलोरें—

बहुत बेचैन है आज का पवन,
और सागर में उठी है हिलोरें नई ।
हँसी है गगन में सुनहली किरण
बहुत सो चुकी, लो, दिशाएँ जगी है,
हुई रात है शेष
आया सवेरा,
सवेरे की ठंडी हवाएँ चली है ।
किनारे से टकरा रही है लहर,
हटो, तुम बहुत अब पुराने हुए,
कि सीमा नहीं मानता है पवन भी
समुन्दर की लहरों को लहरा रहा है,
लहर के थपेड़े,
थपेड़ों की ताकत—
पवन आज ताकत को अजमा रहा है ।
कि हिलने लगे ये किनारे के पत्थर
ये चट्टान—
मोटी सी,
सदियों पुरानी,
लहर क्या उठी है कि हिलने लगी है,

धमकने लगे हैं किनारें, कंगूरे,
समुन्दर का पानी उछल जो रहा है।
लहर की जवानी मचल जो रही है।
कि सीमा नहीं आज,
निस्सीमता है,
धरा में मिलेगा उतर कर गगन।
बहुत बेचैन है आज का पवन।
कहीं दूर बंसी के स्वर बज उठे हैं,
सुरों ने लरज कर पुकारा किसी को,
कि नाविक लहर के थपेड़ों में उलझे
थपेड़ों से डर ?
बांसुरी जो बजी है,
कहीं उस किनारे पै जागा है जीवन,
पवन के सहारे पुकारें जो आतीं,
उसी जिन्दगी की कहानी सुनातीं,
पुकारें उठें और जवानी न जागे ?
जवानी जगे और जमाना न बदले ?
हवा के झकोरों में बँसी के ये स्वर,
सुरों में नई जिन्दगी के तराने
विभा से धुली ये चमकती दिशाएँ—
थिरकती दिशाओं में आई किरण।
बहुत बेचैन है आज का पवन
और सागर में उठी है हिलोरें नई।

ोरें--

यह लकीर किसने खींची है ?
बाँट रही है जो धरती को,
धरती के मालिक मनुष्य को,
चीर रही है जो मनुष्य के
अन्तरतम को ?
शतदल की सौ पंखुरियाँ
सौ फूल नहीं है
एक फूल है।
सागर में अनगिन हिल्लोरें
रूप-रंग में भिन्न
किन्तु सागर, सागर है
लहर नहीं है।
किसके निष्ठुर हाथ
पंखुरियाँ इस शतदल की नोच रहे हैं ?
कौन जलाता आज चला है इस मधुवन को ?
यह लकीर तुम खींच रहे हो ?
बुरा काम है,

इन कलियों के मधु-ग्रंचल मे
तुम ग्रपनी कल्मप-चिनगारी
ग्रौर न फेंको
जल जाग्रोगे,
ग्रौर न रोको
जन जाह्नवि की
प्रखर धार को,
वह जाग्रोगे,
ग्रौर जान लो—
धरा एक है,
धरती का इन्सान एक है,
प्राण एक है,
जगती का विशाल ग्रमृत-घट
स्नेह-तरगित,
वंधु ! गरल की कडवी बूँदे
सुधा-चषक मे ग्रौर न घोलो,
सीमाग्रो का नाग-पाश यदि फैलाग्रोगे
बधु ! जहर से जल जाग्रोगे,
मन-प्राणों को
इस बन्धन मे
ग्रौर न बाँधो,
हे विराट !

लकीरें

ये क्षुद्र लकीरें और न खींचो—
शतदल की सौ पखुरियाँ
भी फूल नहीं हैं—
एक फूल है।

जहर के दांत—

सोया सोया प्यार जगाकर
खिली धूप में
खेल चला है,
यह प्रभात कितना सुन्दर है !
ये इस तरु के
सघन शिखर पर
रवि का रेशम
मृदु चमकीला
बिछल रहा है,
और सुनहली इन किरणों में
लिपटी, लिपटी
सहमी सकुची
यह बुलबुल अपने प्रियतम से
प्यार जगाती ।
धन्य भाग्य ! मैं देख रहा हूँ
इस विहगी का प्रणय-निवेदन
धन्य भाग्य ! मैं देख रहा हूँ

के दाँत

दो निश्छल,
अकलुष हृदयों का
यह नैसर्गिक प्यार
मधुरतम
खिली धूप में।
मैं ?
हाँ, मैं ही,
मनु का वंशज
इस अखण्ड धरती का स्वामी
सप्त सिंधु का अडिग अधीश्वर
नभ के पवनों का संचालक
शक्ति प्रणेता,
सोच रहा हूँ—
किस फन्दे से वश में कर लूँ
विहग–युगल को,
पंख नोच लूँ।
क्या ?
यह बुलबुल तो गाती है।
मैं असीम कल्मष का धारी
मनु का वंशज
सीख रहा हूँ
शीघ्र जगत से

घृणा-द्वेष से–
और स्वप्न सी प्रणय रज्जु में
लिपटा-भूला
यह बुलबुल का निर्बल जोडा
चहक रहा है ?
सोच रहा हूँ–
अपनी ये जहरीली दाढ़ें
अभी गड़ा दूँ
और, हृदय के विष की ऐसी फूंक लगाऊँ–
जल जाए धरती का सारा स्नेह-समर्पण,
इस प्रभात का सारा मंगल
जल भुन जाए,
बुलबुल के बिखरे पँखों पर
बुझी राख पर
दाँत गडाए
फन फैलाए
मैं सुख की दो साँसे ले लूं ।

●

किस बीन के छिड़े ये तार ?–

किस बीन के छिड़े ये तार,
किस पवन से उठी ये पुकार,
कौन कहे ?
किसे ये होश, कि, पिलाई किसने ?
किसे ये ख्याल कि नशा आया क्यों कर ?
ये आग जो लगी आज,
लगाई किसने ?
यही क्या कम कि जले जाते है
ये नशा, और
ये राह हमारी, कि चले जाते है ।
किसे ये फिक्र कि कांटों से गुजरना है ?
ये जो सीने से टपकता है लहू,
एक नही,
हर सीने से–
ये रहे कैसे, कौन कहे ?
जब टपकता हो लहू हर सीने से,
जब बरसती हो सभी की आंखें

किस बीन के छिड़े ये तार ?

और लगी हो आग सभी साँसों मे,
तब किसे ये फिक्र कि काँटों से गुजरना है ?
किसे ये ख्याल–
ये आग जो लगी आज, लगाई किसने ?
और ये आकाश में आए बादल,
ये बिजली की तड़प,
अंधकार
आरपार ।
किस प्राण के जले ये दीप–
ये बिजली की चमक लौट चली,
किस कंठ मे फूटे निर्झर–
ये धरा महक चली,
किस राग का लहरा अँचल–
कि झरा प्यार
बेशुमार,
कौन कहे ?
किस बीन के छिड़े ये तार ....।

आकाश-कुसुम

ओ मेरे आकाश-कुसुम !—

बार बार सुख के सपनों मे क्यो आते हो ?
भेद चुके हो जब, स्मृतियाँ क्यो दुहराते हो ?
ओ मेरे आकाश-कुसुम ! ओ मेरे सुन्दर !
क्या मन के वीराने मे यूं छिपे हुए हो ?
मन की अभिलाषाएँ तुम तक पहुँच न पाती
इतना रह कर दूर, हृदय से मिले हुए हो,
ओ मेरे इन्द्रियातीत-जग के छाया-तनु !
क्यो मेरे निराश नयनो मे मुसकाते हो ?
बार बार सुख के सपनो मे
क्यो आते हो ?

एक स्नेह की गर्म श्वास पर मन इठलाया
एक तुम्हारे इंगित ने तूफान उठाया,
ओ मेरे निष्प्राण-प्राण के शुभ सचालक !
खोकर मैने तुम्हे, कहो क्या नही लुटाया ?
अब तुम सपनो की गलियो मे लुक छिप कर आ
बुझे दीप की बाती को क्यों उकसाते हो ?
बार बार सुख के सपनो मे
क्यो आते हो ?